International Journal of Advanced Research and Development
ISSN: 2455-4030
Impact Factor: RJIF 5.24
www.advancedjournal.com
Volume 2; Issue 5; September 2017; Page No. 816-817

विधवा जीवन की त्रास्दी और भाभी रेखाचित्र का मूल्यांकन

नरेश कुमार
हिन्दी प्रवक्ता, राजकीय मॉडल महाविद्यालय, 'महानपुर', जम्मू और कश्मीर, भारत।

प्रस्तावना

हिन्दी कविता में आधुनिक मीरा के नाम से जानी जाने वाली कवयित्री महादेवी वर्मा ने जो भूमिका पद्य की स्मृद्धि में निभाई है, हिन्दी गद्य में वह भूमिका और भी महत्त्वपूर्ण है। हिन्दी कविता में वह जहाँ भाववादी दृष्टिकोण से याद की जाती हैं, वहीं गद्य में उनकी छवी एक प्रखर विचारक के रूप में सामने आती हैं। अतीत के चलचित्र, स्मृति की रेखाएँ, और श्रंखला की कड़ियाँ आदि उनके गद्य की महत्त्वपूर्ण और चर्चित कृत्तियाँ हैं। यह रचनाएँ भारतीय समाज व्यवस्था में पिस रही स्त्री की पीड़ा को अंकित करती हैं। कोई यह सोच भी नहीं सकता कि कविता में स्त्री को 'नीर भरी दुख की बदली' तक दर्शाने वाली कवयित्री गद्य में आते ही अपने चिंतन से भारतीय हिन्दू समाज की चूलें हिला देगी। करूण रस उनकी कलम का मुख्य आधार बिन्दू है और इसी करूणा से वह विचार तक की यात्रा कर जाती हैं। हिन्दी के प्रसिद्ध प्रगतिशील आलोचक मैनेजर पाण्डेय उनके चिंतन के बारे में लिखते हैं कि,'' महादेवी वर्मा भारतीय स्त्री के जीवन के अनुभवों और आकांक्षाओं की अभिव्यक्ति करने वाली कलाकार हैं, उसके जागरण का अभियान चलाने वाली कार्यकर्ता और उसकी पराधीनता के जटिल रूपों का विश्लेषण तथा स्वाधीनता की सम्भावनाओं की तलाश करने वाली दार्शनिक भी हैं।''[1] पाण्डेय जी की दो बाते यहां विशेष विचारणीय हैं एक– स्त्री की पराधीनता के जटिल रूपों का विश्लेषण और दूसरी– स्वाधीनता की संभावनाओं की तलाश करने वाली दार्शनिक। 'भाभी' रेखाचित्र में महादेवी वर्मा के लेखन के यही पहलू सामने आते हैं। प्रस्तुत रेखाचित्र एक विधवा की सामाजिक दशा का यथार्थ चित्र अंकित करता है। हमारी समाज व्यवस्था चाहे वह किसी भी धर्म की हो उसने स्त्री को दोयम दर्जे में ही रखा और रखना चाहा है। भारतीय समाज स्त्री के लिए कितना समवेदनशील रहा है इसका अंदाजा इस बात से लगाया जा सकता है कि इस देश को इकसवीं सदी में आकर भी क्यों बेटी बचाओ के नारे देने पड़ रहे हैं। इन्हीं सब नारों से स्पष्ट हो जाता है कि नारी अभी भी कितनी मुक्त है। भारतीय समाज की संरचना ऐसी संरचना रही है जहां नारी का शोषण एक आम और सामान्य बात है। उसके तमाम मौलिक अधिकारों का हनन आज कई कानून होते हुए भी खुलेयाम होता है और हम सब अपने– अपने रास्ते खिसक लेते हैं या उसी प्रकिया में शामिल होते हैं। घरेलू हिंस्सा, सड़कों की छेड़छाड़ से लेकर बालात्कार और कत्लयाम तक सब उसके इतिहास में रक्ताक्षरों में लिखें हैं और वर्तमान में भी यह रक्त का बहाव रूकने का नाम नहीं ले रहा है। किसी भी समाज में एक महिला का विधवा होना एक प्राकृतिक उपक्रम है पर हमारे समाज में जो उसकी संरचना की गई है वह उसके जीवन को नरक बना देती है। तमाम धर्मों ने एक विधवा के जीने के अपने–अपने विधान सौंपे हैं। विधवा को यह पहनना है, यह नहीं पहनना है। यह खाना है यह नहीं खाना है। ऐसे रहना है और ऐसे नहीं रहना है आदि कई तरह के बंधनों का सामना करना पड़ता है।

भारतीय हिन्दू समाज में तो एक महिला का विधवा होना एक बड़ी कुरीति के रूप में व्याप्त था जो सती प्रथा के रूप में महिलाओं के लिए बिन आई मौत का सबब बनता था। जिससे मुक्ति के लिए एक लम्बा संघर्ष करना पड़ा। राजा राम मोहन राय ने विधवाओं के अधिकार के लिए एक सक्रिय लड़ाई का समाना किया। महादेवी वर्मा का भाभी रेखाचित्र एक ऐसी रचना है जो विधवा विमर्श को जन्म देती नज़र आती है। एक विधवा के प्रति पुरूष का ही नहीं औरत का भी कितना अतातायी रवैया रहता है इसका विश्लेषण भी आलोचय रेखाचित्र में बड़ा मार्मिक तरीके से किया गया है। लेखिका ने एक मारबाड़ी बाल विधवा के माध्यम से स्पष्ट किया है कि एक स्त्री को विधवा होते ही कैसे संयमित जीवन जीना पड़ता है, ''वृद्ध एक ही समय भोजन करते थे और वह तो विधवा ठहरी! दूसरे समय भोजन करना ही यह प्रमाणित कर देने के लिए पर्याप्त था कि उनका मन विधवा के संयम–प्रधान जीवन से ऊबकर किसी विपरीत दिशा में जा रहा है।''[2] एक प्राकृतिक दुर्घटना ने तो उसको व्यथित किया ही होता है। लेकिन समाज उस घटना को विधवा स्त्री को रोज–रोज, हर–पल, हर – क्षण बार – बार इस अहसास के साथ जीने के लिए बाध्य करता है कि वह विधवा है। मानव को जहां मानव का दुख कम करने का प्रयास करना चाहिए। उसको दुख भूलाने और आगे बढ़ने के लिए प्रेरित करना चाहिए जीवन की नई संभावनाएँ तलाशने के लिए हिमायत देनी चाहिए वहीं समाज इसके विपरीत व्यवहार करके उस स्त्री को मानसिक और शारीरिक तरीके से प्रताड़ित करता है। इस बात का वर्णन भी महादेवी वर्मा ने बड़ी बारीकि के साथ किया है कि किस प्रकार उस विधवा स्त्री जो अभी बालिका ही है, ''उस समाधि – जैसे घर में लोहे के प्राचीर से घिरे फूल के समान वह किशोरी बालिका बिना किसी संगी–साथी, बिना किसी प्रकार के आमोद–प्रमोद, मानो निरंतर वृद्धा होने की साधना में लीन थी।''[3] जो लोग अपने समाज की महानताओं के भ्रम पाल कर जी रहें हैं उनको इतिहास के इन काले पन्नों को ज़रूर पढ़ लेना चाहिए। जिनमें औरतों पर हुए अत्याचारों के निशान पड़े हैं। वर्तमान समय की चर्चित कवयित्री अनामिका की एक कविता है 'स्त्रियां' इस कविता में वह कहती हैं कि –

''पढ़ा गया हमको
जैसे पढ़ा जाता है काग़ज
बच्चों की फटी कॉपियों का
चनाजोरगरम के लिफाफे बनाने के पहले।
.....
सुना गया हमको
यों ही उड़ते मन से
जैसे सुने जाते हैं फिल्मी गाने

सस्ते कैसेटों पर
ठसाठस्स ठुँसी हुई बस में।''[4]

उपर्युक्त पंक्तियों में जो सवाल उठाये गये हैं या पुरूषसत्ता से जो शिकयते की गई हैं। यह सवाल एक पढ़ी– लिखी आधुनिक नारी ही कर सकती है। महादेवी वर्मा के समय कोई नारी यह सवाल नहीं कर सकती थी, अगर करती भी होगी तो कोई इनी– गिनी ही हो सकती है। लेकिन यह एक कड़वा सच है कि महिलाओं को अपनी इच्छाओं को दबाना पड़ता है। उनको कभी किसी ने पूरे मन से पढ़ने की कौशिश नहीं की न उस समय न आज ही की जा रही है। तभी तो सुमन राजे जैसी लेखिकाओं ने स्त्री लेखन के इतिहास को स्वयं लिखना पढ़ा जिसको उन्होंने नाम ही दिया '' आधा इतिहास''। औरत को आज भी उड़ते मन से ही सुना जाता है। 1941–42 में एक स्त्री ही स्त्री को पूरे मन से पढ़ सकती थी, उसको पूरे मन से सुन सकती थी और नीर भरी दुख की बदली को अभिव्यक्त कर सकती थी। उनके लेखन ने महिलाओं के प्रति देखने के रवैये को बदला। विधवाओं के जीवन से कैसे अमोद–प्रमोद छीन लिया जाता है, हार–श्रंगार को छीन लिया जाता है और उसके जीवन में से तमाम रंग छीन कर मात्र दो रंगों में उनके जीवन को बांध दिया जाता है। भाभी रेखाचित्र में अबोध बालिका के रूप में लेखिका कहती है कि,''भाभी को तो सफेद ओढ़नी और काला लहंगा या काली ओढ़नी और सफेद बूटीदार कत्थई लहंगा पहने हुए ही मैंने देखा था।'' कैसे उस लड़की को जिसने अभी साल भी शादी किये नहीं हुआ था विधवा होने पर उसकी सारी जिन्दगी नरक बन गई है। जिसने जीवन का कोई सुख आराम नहीं देखा। हर एक औरत अपने आपको तब ही औरत मानती है जब वो मां के रूप को प्राप्त करती है। लेकिन इस लड़की का सारा संसार उजड़ चुका है। लेखिका लिखती है, ''उस 19 वर्ष की युवती की दयनीयता आज समझ पाती हूँ, जिसके जीवन के सुनहरे स्वप्न गुड़ियों के घरोंदे के समान दुर्दिन की वर्षा में केवल बह ही नहीं गए, वरन् उसे इतना एकाकी छोड़ गए कि उन स्वप्नों की कथा कहना भी संभव न हो सका।''[5] यही त्रास्दी है एक विधवा के जीवन की। उसके जीवन में कई संभवानाओं को बच्चन जी के 'नीड़ का निर्माण फिर–फिर' की तर्ज पर खोजा जा सकता है पर समाज एक ऐसे पेरोकार की भूमिका अदा कर रहा होता है कि उस स्त्री को सपना तो दूर उसका घर से बाहर देखना तक उसके मन की चंचलता का प्रतीक बन जाता है और इसी बात के लिए वो महिलाओं में भी चर्चा का विषय बन जाती है। और उसकी ननद जब भी आती उसके शरीर पर घाव कसाले छोड़कर चली जाती है। उसका ससुर कैसे उसको आंगन के बाहर कदम नहीं रखने देता, न किसी को घर में आने देता। संयमित जीवन जीते हुए भी उसको कई तरह के अत्याचारों का सामना करना पड़ता।

लेखिका ने रेखाचित्र में जो गुड्डे – गुड़ियों का संसार बुना है वह भी प्रतीकात्मक रूप लेता दिखाई देता है। जो विधवा स्त्री के घर रूपी सपनों के संसार का प्रतीक बनता है। अत्याचार की इंतेहां उस दिन हो जाती है जिस दिन अबोध बालिका भाभी के लिए अपने हाथों से काढ़ी ओढ़नी को चुपचाप छिपाकर उसको आश्चर्य में डालने के लिए भाभी के सिर पर डाल देती है तो वह कैसे खिल उठती है लेखिका के शब्दों में देखें, ''जब दवे पांव जाकर मैंने उस ओढ़नी को खोल कर उसके सिर पर डाल दिया, तो वह हड़बड़ा कर उठ बैठी। रंगों पर उसके पराण जाते ही थे, उस पर मैंने गुड़ियों और खिलौनों से दूर अकेले बैठे – बैठे मैंने अपने नन्हें होथों से उसके लिए उतनी लम्बी–चौड़ी ओढ़नी काढ़ी थी। आश्चर्य नहीं कि वह क्षण भर के लिए अपनी उस स्थिति को भूल गई, जिसमें ऐसे रंगीन वस्त्र वर्जित थे और नए खिलौने से प्रसन्न बालिका के समान, एक बेसुधपन में उसे ओढ़, मेरी ठुड्डी पकड़कर खिलखिला पड़ी।''[6] लेखिका का यह एक अबोधपन का प्रयोग पूरे बोध के साथ किया गया है जिसे हम मनोवैज्ञाणिक प्रयोग कह सकते हैं। जिस प्रयोग से यह सिद्ध करने की कौशिश की गई है कि विधवा के जीवन में भी खुशियां लाई जा सकती हैं उसके जीवन में दौवारा रंग भर कर। पर समाज को ऐसा पसंद नहीं है ऐसे प्रयोगों से वह कितना क्रूर हो जाता है महादेवी वर्मा कहती हैं कि जब इस अवस्था में अपनी बहू को उसके ससुर और ननद ने देखा तो उसके साथ कितनी क्रूरता की गई,'' इसके उपरांत जो हुआ वह तो स्मृति के लिए भी करूण है। क्रूरता का वैसा प्रदर्शन मैंने फिर कभी नहीं देखा। बचाने का कोई उपाय न देख कर ही कदाचित् मैंने रोना आरंभ किया, परंतु बच तो वह तब सकी, जब मन से ही नहीं, शरीर से भी बेसुध हो गई।''[7]

यह कुछ नहीं हमारे क्रूर समाज का अमानवीय चेहरा है। जिसे वह कभी नहीं देखना चाहता। परंपरओं और लोकलाज की पगड़ी अपने सिर पर अंधों की तरह ढो रहा है। आज भले ही विधवाओं को संवैधनिक अधिकार प्राप्त हैं फिर भी वह तमाम कानून कागजों पर दर्ज हैं क्योंकि उनको मानने वाले अभी उस हद तक मानवीय नहीं हो पाये हैं। इस देश में आज भी कई विधवा महिलाएँ मीडिया के चमचमाते कैमरों और कमरों से दूर इस दर्द को जी रही हैं अंत में कह सकते हैं कि आलोचय रेखचित्र में महादेवी वर्मा ने विधवा के जीवन की त्रास्दी को उजागर कर महिलाओं के प्रति हत्यारे समाज को आइना दिखाने का प्रयास किया है।

संदर्भ

1. मेनेजर पाण्डेय, अनभय सांचा, पृ. 179
2. सं. शहाबुद्दीन शेख, गद्यफुलवारी, पृ.102
3. वही, पृ. 102
4. सं. महेंद्र कुलश्रेष्ठ, काव्य सुमन, पृ.78
5. सं. शहाबुद्दीन शेख, गद्यफुलवारी, पृ.103
6. वही, पृ.105
7. वही, पृ.105